arunjaity1:arunjaity.qxd 9/26/2010 9:05 PM Page 162

नानाजी का एक वाक्य सर्वाधिक प्रेरक है, "हम अपने लिए नहीं, अपनों के लिए हैं। अपने वे हैं जो पीड़ित और उपेक्षित हैं।" सच कहें तो इस बोध वाक्य ने ही शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वावलम्बन व सदाचार के सहारे आदर्श ग्राम की कल्पना को साकार करने की नानाजी की कोशिशों को परवान चढ़ाया है।

तीर्थ बन गया है जयप्रभा ग्राम

नानाजी देशमुख का स्मरण आते ही मन श्रद्धा से भर उठता है। उनकी पुण्यस्मृति में आयोजित भण्डारे में शामिल होने का आमंत्रण मिला तो लगा कि जैसे किसी तीर्थ से बुलावा आ गया हो। यह आयोजन भी उस स्थान पर था जिसे देखने की इच्छा वर्षों से थी। स्थानांतरित होकर फैजाबाद आने के बाद तो कई बार कार्यक्रम भी बना पर फलीभूत न हो सका। गोण्डा जिले में स्थित जयप्रभा ग्राम यानी नानाजी की वह प्रयोगस्थली जो गांवों की खुशहाली का सजीव माडल बनकर एक भरोसे का प्रतीक बन गई है। दीनदयाल उपाध्याय शोध संस्थान के ग्रामोदय प्रकल्प द्वारा संचालित यह ग्राम वास्तव में तीर्थ बन गया है। भण्डारा के निमित्त जयप्रभा ग्राम की यह यात्रा मानस पटल पर नानाजी की ऐसी तस्वीर छोड गई जो न सिर्फ प्रेरक, बल्कि अविस्मरणीय भी रही।

11 अक्टूबर, 1916 को महाराष्ट्र में जन्म लेकर 27 फरवरी 2010 को चित्रकूट में अन्तिम सांस लेने तक की नानाजी की जीवनयात्रा में गोण्डा का जयप्रभा ग्राम एक अहम पड़ाव है। नानाजी से मेरी पहली मुलाकात गोरखपुर के सुप्रसिद्ध गोरखनाथ मंदिर में हुई थी। वह महन्त दिग्विजयनाथ पुण्यस्मृति समारोह में शामिल होने आये थे। अपने अखबार के लिए उनसे बातचीत का आग्रह पहली बार में स्वीकार न हो सका था लेकिन बाद में गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त अवेद्यनाथ के हस्तक्षेप पर वह गैर राजनीतिक चर्चा के लिए राजी हो गये थे। नानाजी से दुबारा भेंट न हो सकी। एक बार चित्रकूट गया तो उनके प्रकल्पों की कल्पनातीत गतिविधियां देखने के बाद मन ही मन उन्हें प्रणाम करके वापस आ गया था। इस बार जयप्रभा ग्राम जाने के बाद उनकी यादें ताजा हो उठीं। महत्वपूर्ण बात यह है कि नानाजी ने जिस आदर्श गांव की परिकल्पना की, उसका नाम उन्होंने लोकनायक जयप्रकाश नारायण और उनकी धर्मपत्नी श्रीमती प्रभादेवी के नाम पर रखा। जयप्रभा ग्राम के मुख्य प्रवेशद्वार से अंदर प्रवेश करते ही बाईं तरफ इन दोनों विभूतियों की प्रतिमाएं दिखाई पडती हैं। यह स्वयं नानाजी के विराट व्यक्तित्व के एक पहलू को उजागर करता है। परिसर में नानाजी का एक वाक्य सर्वाधिक प्रेरक है- 'हम अपने लिए नहीं, अपनों के लिए हैं। अपने वे हैं जो पीड़ित और उपेक्षित हैं।' सच कहें तो इस बोध वाक्य ने ही शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वालम्बन व सदाचार के सहारे आदर्श ग्राम की कल्पना को साकार करने की नानाजी की कोशिशों को परवान चढ़ाया है। लगभग 55 एकड के इस परिसर में कृषि, शिक्षा और अध्यात्म का अद्भुत समन्वय दिखता है। शिक्षा के लिए जहां चिन्मय ग्रामोदय विद्यामंदिर इंटर कालेज स्थापित है, वहीं रामनाथ आरोग्यधाम और मां सत्यावाई मातृ शिशु कल्याण केन्द्र अपनी पूरी क्षमता से स्वास्थ्य सेवा के कार्य में जुटा हुआ है। जयप्रभा ग्राम में नानाजी की कुटिया समाजसेवा को ही साधना का पथ मानने वाले कर्मयोगियों के लिए प्रेरणापुंज है। यह कुटिया एक आकर्षक तालाब के किनारे है। तालाब के पश्चिमी ओर आठ एकड में फैली वह वगिया है जिसमें शायद ही कोई ऐसा वृक्ष न हो जिसे लोग जानते पहचानते हैं। शोध संस्थान के सचिव रामकृष्ण तिवारी कहते हैं कि यह परिसर पर्यटन की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण हो गया है। रोज बड़ी संख्या में लोग यहां न सिर्फ धार्मिक उद्देश्यों से बल्कि गांवों के विकास का सूत्र खोजने आते हैं। कृषि के जरिए आत्मनिर्भरता, शिक्षा के जरिए व्यक्तित्व विकास और साधना के जरिए आध्यात्मिक विकास के लिए यहां अपेक्षित वातावरण उपलब्ध है। परिसर में स्थित चारों धाम भक्तिधाम मंदिर आस्था का केन्द्र बन गया है। ■

नानाजी थकने नहीं देते थे

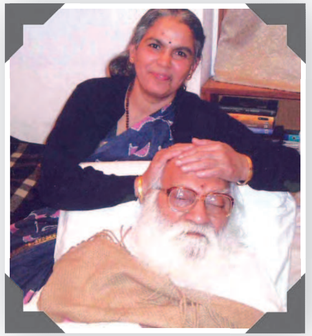

लेखक परिचय

*नानाजी द्वारा गढ़ी गई **कुमुद दीदी** को डीआरआई, दिल्ली में एक बार भी जो मिला, वह उनके ममतामयी व्यवहार को भूल नहीं सकता।*

मैं 1980 से नानाजी के साथ थी। 30 वर्षों में अपने पति श्रीकांत और पुत्र के साथ कितने सुख-दुःख देखे। पर नानाजी ने सारे दुःख हर लिए थे। 'मैं तो 21 वर्ष की उम्र में यहां आई थी। अपने गांव से पहले तो बनारस गई। वहां यादव काका मिले। वे हमें नानाजी के पास ले आए। नानाजी ने कहा, "तुम चिंता मत करो। श्रीकांत की जिम्मेदारी हमारी होगी और हमारी जिम्मेदारी तुम्हारी।" मैंने नहीं समझा।

डॉ. जे.के.जैन और डॉ. रागिनी जैन को बुलाकर उन्होंने मेरे पति का इलाज करने के लिए कहा। डी.आर.आई. में खाना बनाने और लोगों की देखरेख करने लगी। गांव से आई थी। मुझे कुछ भी नहीं आता था। वहां आने वाले छोटे-बड़ों की पहचान नहीं थी। सबसे बड़ी बात कि नानाजी वहां आए लोगों में भेदभाव नहीं करते थे। उन्होंने सिखाया कि सबसे बड़ी सेवा भोजन देना है। खाना बनाकर और प्रेम से खिलाकर ही तुम महिलाएं पिता, भाई, पति, पुत्र और सगे-संबंधियों के दिल पर राज करने लगती हो। सच हम पुरुषों को हार माननी पड़ती है।" और भी ऊंची-ऊंची बातें करते थे नानाजी। मैं तो कम बुद्धि की थी। उसमें बड़ी-बड़ी बातें कैसे अंटाती। मैंने कहा, "मैं भी पढ़ूंगी नानाजी। मैट्रिक की परीक्षा दूंगी। आप भी तो बेटियों को पढ़ाने की बात करते हैं।" वे बोले, "डिग्री लेकर क्या करोगी। मेरे पास भी कोई डिग्री नहीं है। काम करो। परिश्रम करो। काम को काम करके पढ़ो। जीवन को जानो।"

बहुत खटाते थे नानाजी। इतने लोग यहां आते थे। सबका खाना बनाना। प्रेम से खिलाना, उनके कमरे की व्यवस्था, जाते समय उनका टिफिन भरकर देना, ढेर सारा काम। कुमुद... कुमुद...कुमुद की रट लगाए रखते। बड़े से बड़े लोगों से मेरा परिचय कराना नहीं भूलते। मैं भी नहीं थकती थी। नानाजी ने दौड़ते रहने की लत लगा दी थी। उनके जाने के बाद खाली बैठी अब थक जा रही हूं। नानाजी कहते थे, "परिश्रम से थकान नहीं आती। बैठे रहने से आदमी थकता है।"

एक बार नानाजी नागपुर से आए। मैं ही उन्हें लेने एयरपोर्ट पहुंच गई। बहुत कोहरा था। प्लेन 10 बजे रात्रि की बजाय 3 बजे भोर में उतरा। नानाजी गाड़ी में बैठे। पूछा, "कितने बजे आई?" मैंने कहा, "साढ़े नौ बजे।" "तब से गाड़ी में बैठी रही? कमाल है। तुम तो सेवाकार्य में कइयों से बहुत आगे निकल आई।" मैं बहुत भाग्यशाली हूं। नानाजी का स्नेह मिला। प्रारंभ में उनकी डांट पड़ी थी। संघ के बड़े अधिकारी के लिए भोजन बनाना था। संघ कार्यालय से सूचना आई थी। मैं नहीं बना पाई थी। उन अधिकारी को भी तो नहीं जानती थी। नानाजी को पता चला। वे मुझ पर बरस पड़े। बहुत डांट पड़ी। मैं रोई भी। पर उन्होंने समझाया -"यहां आने वाले अधिकांश लोग देशसेवा में लगे हैं। यदि उनके लिए भोजन बना देती हो, घर बैठे देश की सेवा हो तो कर ली।"

मेरे मन में उनकी बात गड़ गई। फिर तो कभी डांटने का उन्हें मौका नहीं दिया। आने वाले भी मुझे सम्मान देते थे, फिर मैं उनकी चिंता कैसे नहीं करती। मुझे मालूम था कि यादव काकाजी, भिड़ेजी, भानुजी किस-किस को क्या पसंद था। उनके आने पर मैं वही बनाती। मैं तो बिहार के सामान्य वर्ग से आई थी। नानाजी ने मुझे महाराष्ट्र की पूरनपूड़ी, श्रीखण्ड, पोहा, साबुदाने की खिचड़ी, पीठला बनाना स्वयं सिखाया। कभी-कभी वे रसोईघर में जाकर स्वयं खाना बनाते थे। कपड़ा रखना, बिस्तर साफ-सुथरा रखना, सब सिखाते थे।

एक बार उन्होंने कहा, "अब मुझे चिंता नहीं। कुमुद सब संभाल लेगी।" बड़ी जिम्मेदारी दी थी उन्होंने। उनके भरोसे को सम्मान देना भी मेरा काम था। मैं हर वक्त सोचती थी, "कहीं नानाजी को मेरे किसी व्यवहार से दुःख न पहुंचे।"

मुझसे अधिक हेमंत भइया ने उनकी सेवा की। हर पल उनके साथ रहते। नानाजी का उन पर बड़ा विश्वास था। डॉक्टर के आने पर भी उन्हीं को बुलाते। कोई दवा उन्हें मैं देने जाऊं तो पूछते, "हेमंत कहां है?" उनकी मृत्यु के समय भी हेमंत साथ थे। बड़े भाग्यशाली हैं। मुझे इसी बात की तकलीफ है। 10 जुलाई को नानाजी दिल्ली से चित्रकूट गए। बोले, "अब नहीं लौटूंगा। मुझे बहुत दुःख हुआ। हर महीने दस दिनों के लिए मैं चित्रकूट जाती थी। 27 फरवरी की टिकट थी। मैं नहीं जा सकी। उनका मृत शरीर ही देखा। मन से बात निकलती नहीं।"

पिछले 25 वर्षों में देश के किसी भी कोने से किसी लड़की या लड़के को ले आते थे। नानाजी कहते थे, "यह लड़की बहुत मेधावी है। इसे बहुत बड़ी बनाना है। तुम इसे प्रेम से रखना। मां-बाप को छोड़कर आई है, उसे कोई तकलीफ न हो।" उन्होंने मुझे क्या-क्या नहीं सिखाया। ■